Impact Factor
5.307 (SJIF)

RESEARCH HUB
International Peer-Reviewed Multidisciplinary E-Journal

ISSN
2582-9173

भारत का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और उसका अतीत

डॉ सी पी गुप्ता

इतिहास स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय

हरदा मध्य प्रदेश

मोबाइल नंबर 7974824118

ई-मेल chandrapal.gupta@yahoo.com

शोध सारांश :

भारत में जब भी राष्ट्रवाद के विचार की बात उठती थी तब यही माना जाता था कि अंग्रेजों ने भारत को एकता के सूत्र में पिरोकर ही, यहां राष्ट्रवाद का बीजारोपण किया था, किंतु यह भ्रांति के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है, क्योंकि भारत का राष्ट्रवाद अति प्राचीन, बहुत गहरा और भावनात्मक है। भारत का अतीत संप्रभु होकर के भी साम्राज्यवादी नहीं बनने का है, भारत का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद न तो 18वीं शताब्दी के जर्मनी और इटली के एकीकरण में प्रयुक्त होने वाला राष्ट्रवाद है और न ही मार्क्सवादियों द्वारा प्रयुक्त होने वाला राष्ट्रवाद। पाश्चात्य राजनीतिक विचारकों और उनकी पृष्ठभूमि के आधार पर राष्ट्रवाद को पोषित करने का कार्य धर्म, भाषा और क्षेत्र करते हैं, किंतु इतिहास की तमाम नजीरों से सिद्ध होता है कि धर्म, भाषा और क्षेत्र ही व्यक्ति को व्यक्ति से लड़ाने का भी कार्य करते रहे हैं, इसीलिए यूरोप का राष्ट्रवाद कभी उन्हें एकजुट करता है, तो कभी उग्र राष्ट्रवाद का रूप धारण करके संपूर्ण विश्व मानवता को खतरे में डालता है। किंतु भारत का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद महोपनिषद् में सुंदर तरीके से वर्णित किया गया है-

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम् ।
उदारचरितानां तु वसुधैवकुटुम्बकम् ॥

अर्थात - यह मेरा अपना है और यह नहीं है, इस तरह की गणना छोटे या संकीर्ण बुद्धि वाले लोग करते हैं। उदार हृदय वाले लोगों के लिए तो सम्पूर्ण पृथ्वी ही परिवार है। इसीलिए हमने बलात अपने विचारों को किसी पर थोपने का प्रयास नहीं किया। भारत का राष्ट्रवाद राजनीतिक भी नहीं है, बल्कि इसका आधार संस्कृति और दैवीय मान्यताएं हैं। इसका उद्भव और विकास वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक किसी न किसी रूप में परिलक्षित होता है। भारत का राजनीतिक विकास विभिन्न उतार-चढ़ावों से भरा रहा है, किंतु सांस्कृतिक राष्ट्रवाद उत्तरोत्तर वृद्धि का ही रहा है। भारत सहिष्णुता रूपी जमीन पर ही अपने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को उगाने पर विश्वास करता रहा है।

कुंजी शब्द : *राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक, विविधता सहिष्णुता, सहजीविता, परमार्थ आदि।*

भूमिका :

भारत अपने प्रारंभिक समय से लेकर आज तक अनगिनत घटनाओं का साक्षी है, किंतु उसके अस्तित्व को किसी भी घटना ने निर्मूलित नहीं किया, बल्कि प्रत्येक घटना के बाद वह अधिक सहिष्णु और लोक कल्याणकारी अवधारणा के साथ सशक्त होत आया है। भारत के प्राचीन गुरुकुलों, आश्रमों और पारिवारिक पृष्ठभूमि में ही संस्कारवान और चरित्रवान नागरिक प्रशिक्षित होते रहे हैं, इसीलिए संसाधनों और साध्यों को प्राप्त करने के लिए

Research Hub International Journal

यहां कभी प्रतिस्पर्धा नहीं देखी गई, और जब कभी प्रतिस्पर्धा दिखी तो वह त्याग, बलिदान और सेवा की ही दिखी।

भारत ने धर्म, भाषा, वर्ग और क्षेत्र के साथ सामंजस्य स्थापित करके इन्हें अपनी शक्ति के रूप में विकसित किया और सबको आत्मसात करने की हमेशा कोशिश की। भारत में सांस्कृतिक एकता की स्थापना के प्रमुख आधार हैं शिव पुराण में वर्णित 12 ज्योतिर्लिंग जो कि भारत के विभिन्न क्षेत्रों, दिशाओं और भाषाई क्षेत्रों में हैं जैसे सोमनाथ, मल्लिकार्जुन, महाकालेश्वर, ओमकारेश्वर, केदारनाथ, भीमशंकर, काशी विश्वनाथ, त्र्यंबकेश्वर, वैद्यनाथ, नागेश्वर, रामेश्वर और घुश्मेश्वर आदि। इसी प्रकार आदि शंकराचार्य ने उत्तर में जोशीमठ, पश्चिम में द्वारका, पूर्व में पुरी और दक्षिण में श्रृंगेरी मठ की स्थापना करके भारत में सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा दिया। आदि शंकराचार्य ने अठारह महाशक्तिपीठ का भी वर्णन किया है और देवी पुराण में वर्णित 108 शक्तिपीठें भारत में धार्मिक और सांस्कृतिक एकता की प्रतीक मानी जा सकती हैं।

भारत के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की शक्ति का अनुमान इससे भी लगाया जा सकता है कि 1757ई. से लेकर 1857ई. तक अंग्रेजों के शोषण के विरुद्ध भारत के विभिन्न क्षेत्रों में 250 से अधिक छिटपुट और 40 से अधिक बड़े विद्रोह हुए। जिनमें से अधिकांश का तात्कालिक कारण धार्मिक या सांस्कृतिक ही था। कोल, भील संथाल आदि आदिवासी विद्रोहों का नेतृत्व उनके धार्मिक मुखियाओं के द्वारा ही किया गया जैसे कि बिरसा मुंडा, ताना भगत, सिद्धू कान्हू आदि। 1770ई. के सन्यासी विद्रोह का भी प्रमुख कारण अंग्रेजों और मुसलमानों द्वारा हिंदू संन्यासियों को धार्मिक और वित्तीय आधार पर सताया जाना था, उन्हें अपने तीर्थ स्थलों में जाने के लिए कर देने के लिए बाध्य किया जाना था। इसी प्रकार 1857ई. का महाविप्लव, जिसमें अपनी संस्कृति, धर्म, समाज और स्वराज्य को बचाने का ही संकल्प व्यक्त किया गया था। तत्कालीन मुगल बादशाह बहादुरशाह ज़फ़र ने स्वराज्य स्थापना के लिए घोषणा करते हुए आवाह्न किया था कि **"हिन्दवासियो, यदि हम सब मन में ठान लें तो शत्रु को क्षण भर में धूल चटा सकते हैं और अपने प्राणप्रिय धर्म एवं प्राणप्रिय देश को पूरी तरह भय मुक्त कर सकते हैं।"** एक प्रकार से स्वत्व के सांस्कृतिक मूल्यों को जाग्रत कर सांस्कृतिक राष्ट्रवाद स्थापित करने का ही आह्वान था।

1890ई. में जब महाराष्ट्र में भयानक प्लेग फैला और अंग्रेज अधिकारियों तथा पुलिस वालों के द्वारा भारतीयों के धर्म और अस्मिता को तार-तार किया गया तब इसे धर्म संकट के रूप में देखा गया, तभी बाल गंगाधर तिलक ने महाराष्ट्र में 1893ई. में गणेशोत्सव और 1895ई. में शिवाजी उत्सव अंग्रेजों के विरुद्ध युवा क्रांतिकारियों को प्रशिक्षित करने के लिए ही स्थापित किया था।

हिंदू मुस्लिम एकता को विखंडित करने लिए जब तत्कालीन वायसराय लॉर्ड कर्जन ने 1905 ई. में बंगाल का विभाजन किया, तब रविंद्र नाथ टैगोर और रमेंद्रसुंदर त्रिवेदी ने भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को बचाने के लिए विभाजन की प्रभावी तिथि 16 अक्टूबर को राखी दिवस के रूप में मनाने का आह्वान किया और संपूर्ण देश में हिंदू और मुसलमानों ने एक दूसरे को राखी बांधकर एकता का जो परिचय दिया, उससे संपूर्ण ब्रिटिश सरकार हिल गई। भारतीय संस्कृति की राखी ने संपूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरो दिया। इस समय सबसे अधिक सफलता स्वदेशी आंदोलन को मिली जिसका आधार भी भारतीय सांस्कृतिक परंपरा के त्योहार और धार्मिक मेले ही थे। परिणामस्वरूप औपनिवेशिक सरकार को झुकना पड़ा और 1911ई. में बंगाल विभाजन को रद्द करना पड़ा। इतना ही नहीं महात्मा गांधी के आंदोलनों में प्रभात फेरियों का उल्लेखनीय योगदान रहा है, जिन्होंने संपूर्ण भारत को उत्साह के साथ एकता के सूत्र में पिरोने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। उक्त सभी प्रतीक सांस्कृतिक हैं और उनकी चेतना जन-जन में व्याप्त अंत: उनके विरुद्ध किया गया कार्य किसी को भी स्वीकार्य नहीं रहा है और इसकी रक्षा के लिए

किसी भी स्तर की कुर्बानी देने के लिए जन मानस सदैव तत्पर रहा है।

भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का अतीत :

भारत में सनातन काल से ही सांस्कृतिक राष्ट्रवाद किसी न किसी रूप में विद्यमान था और हमेशा ही भारतीय अपने धर्म, समाज और संस्कृति की रक्षा के लिए स्वयं को समर्पित करते रहे हैं। यहां तक की अवतारवाद की अवधारणा भी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के रक्षार्थ ही मानी जा सकती है, जैसा की रामचरितमानस में लिखा है-

जब जब होई धरम की हानी, बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।
तब-तब प्रभु धरि विविध सरीरा, हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।

इसी प्रकार जब द्वापर युग में धर्म पर संकट आया और स्त्री जाति की अस्मिता खतरे में दिखाई देने लगी तब पुनः विष्णु ने भगवान कृष्ण के रूप में जन्म लिया, वे स्वयं भगवत गीता में कहते हैं कि-:

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥ 4/7
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥ 4/8

जब तीन सहस्त्राब्दी ईसा पूर्व भारत दुनिया के अन्य देशों की तुलना में अधिक सभ्य और सशक्त हुआ तब भी उसने किसी देश को डरा, धमका कर या युद्ध के द्वारा भूमि, संसाधन या शरीर पर कब्जा नहीं किया बल्कि वहां के नागरिकों के विचारों और दिलों पर अधिकार स्थापित किया। जिसका आधार प्रेम, सहयोग, भाईचारा, सहिष्णुता और सहजीविता था। परिणामस्वरूप दक्षिण पूर्व एशिया और पश्चिम एशिया के अनेक देशों के नागरिकों ने भारत के आध्यात्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों को स्वेच्छा से स्वीकार किया। यद्यपि भारत ने सोने की तलाश में ही स्वर्णभूमि (जावा,सुमात्रा, मलाया द्वीप), पश्चिम में रोम और पूर्व में चीन तक की यात्राएं की थी।

चीन :

चीनी सम्राट मिंग ति के निमंत्रण पर 67ई. में भारत के प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान धर्मरक्षित और कश्यप मातंग चीन की यात्रा पर गए। उसके बाद तो भारतीय विश्वविद्यालयों के अनेक शिक्षक जैसे कि बौधिधर्म जिन्होंने नालंदा विश्वविद्यालय में योग दर्शन की शिक्षा लेकर चीन में ध्यान (मनन) का प्रचार-प्रसार किया जिसे चीनी भाषा में **चान** कहते थे। इसीलिए बौधिधर्म की चीन और जापान में पूजा होने लगी। चौथी शताब्दी में **वेई वंश** के प्रथम सम्राट ने बौद्ध धर्म को चीन का राजधर्म ही घोषित कर दिया और हजारों भारतीय संस्कृत की पुस्तकों का चीनी भाषा में अनुवाद कराया, परिणामस्वरूप बौद्ध धर्म जन-धर्म बन गया और आज भी चीन में बहुत बड़ी संख्या में बौद्ध मतानुयायी हैं। भारत और चीन के बीच में लगातार विद्वानों का आना-जाना होता रहा, जिनमें भारत आने वाले फाह्यान और व्हेनसांग प्रमुख हैं, यह चीनी यात्री भारत से अपने साथ अनेक हस्तलिखित पाण्डुलिपियां ले गए।

कोरिया :

कोरिया भारतीय धर्म और संस्कृति के संपर्क में चीन के माध्यम से आया। 352ई. में सुन्दो नामक एक बौद्ध भिक्षु बुद्ध की मूर्ति लेकर तथा 384ई. में आचार्य मल्लानंद कोरिया पहुंचे थे, कोरिया के प्योंगयांग नगर में भारतीय भिक्षुओं ने 404ई. में दो मंदिर बनवाए थे जिसके अवशेष आज भी सुरक्षित हैं। कोरिया में बने मंदिर और बौद्ध विहार धर्म और ज्ञान के प्रमुख केंद्र के रूप में विकसित हुए। कोरियाई भारत के धर्म, दर्शन, मूर्ति बनाने की कला, चित्रकला, धातुविज्ञान, ज्योतिष, खगोल शास्त्र, आयुर्वेद आदि विधाओं से परिचित हुए। आठवीं और नवीं शताब्दी में पहुंचे

भारतीय योग दर्शन का कोरिया के राजा, रानी, अधिकारी, सैनिक और आम नागरिकों में अत्यधिक प्रचार-प्रसार हुआ, यहाँ छः हजार खंडों में बौद्ध ग्रंथों का प्रकाशन किया गया।

जापान :

जापान में बौद्ध धर्म कोरिया के माध्यम से पहुंचा और 552ई. से भारतीय संस्कृति के जापान में प्रमाण मिलना प्रारंभ हो जाते हैं। जापान में बौद्ध धर्म को राजधर्म घोषित कर दिया गया था। यहां संस्कृत मंत्रों को शित्तन लिपि में लिखा गया शित्तन सिद्धम का ही पर्यायवाची है, आज भी जापान में संस्कृत के अध्ययन का प्रचलन है। सातवीं शताब्दी में जापानी राजकुमार शोतोकुतोइशी के समय चीनी भाषा में अनुवादित बौद्ध ग्रंथ जापान पहुंचे थे।

तिब्बत :

तिब्बत के राजा नरदेव ने अपने मंत्री धोन्मी सम्भोट और 16 तिब्बती विद्वानों को बौद्ध धर्म की शिक्षा प्राप्त करने हेतु मगध भेजा था। उन्होंने भारतीय लिपि के आधार पर ही तिब्बत के लिए एक नई लिपि का आविष्कार किया और आज भी यहां के अधिकांश ग्रंथ इसी लिपि में लिपिबद्ध किए गए हैं। निश्चित तौर पर धोन्मी सम्भोट अपने साथ अनेक भारतीय पुस्तक भी ले गए उनमें से पाणनी की अष्टाध्याई भी शामिल है।

श्रीलंका :

ऐतिहासिक साक्ष्यों से पता चलता है कि सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म की शिक्षाओं के प्रसार के लिए अपने पुत्र महेंद्र और पुत्री संघमित्रा के साथ अनेक बौद्ध विद्वानों को श्रीलंका भेजा था। उस समय वहां का शासक देवानामपिय था। इसी समय बोधगया की बोधिवृक्ष की एक शाखा भी वहां रोपित की गई थी। श्रीलंका में महाविहार और अभयगिरी नामक बौद्ध विहारों का भी निर्माण किया गया। जिसकी सहायता से बौद्ध धर्म का प्रचार-प्रसार हुआ। श्रीलंका की संस्कृति को बौद्ध धर्म ने परिष्कृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बौद्ध धर्म के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ दीपवंश और महावंश का संकलन यहीं पर किया गया था। श्रीलंका की मूर्तिकला, चित्रकला, लोकगीत, वास्तुकला, शिक्षा आदि पर भारतीय प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। श्रीलंका की चित्रकला की सबसे सुंदर कृति सिगीरिया में और पांचवी शताब्दी में राजा कश्यप द्वारा बनवाए गए मजबूत महल में अमरावती की कला शैली को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

म्यांमार (वर्मा) :

अमरावती और ताम्रलिप्ति से जाने वाली भारतीय दूसरी शताब्दी में म्यांमार में बसने लगे थे, जिनमें व्यापारी, ब्राह्मण, कलाकार शिल्पी आदि प्रमुख थे। पगान वर्मा का प्रधान स्थल था जो 11वीं और 13वीं सदी तक बौद्ध संस्कृति के संरक्षण का केंद्र का बना रहा। यहां के अनिरुद्ध नामक राजा ने खेजेगोन पैगोडा तथा हजारों की संख्या में बौद्ध मंदिर बनवाए और बौद्ध धर्म और हिंदू धर्म ग्रंथों का पाली भाषा में अनुवाद भी कराया। वर्मा के राजदरबार पर भारतीय संस्कृति और परंपरा का प्रभाव देखा गया है। यहां के राज-ज्योतिषी, भविष्यवक्ता, तथा आचार्य ब्राह्मण ही हुआ करते थे, जिन्हें पोन्ना (पंडित) कहा जाता था।

थाईलैंड :

थाईलैंड ने अपने स्थापना के 60वें वर्ष में (सन् 2011) 20 बहत के सिक्के पर ब्रह्मा, विष्णु, महेश की त्रिमूर्ति उकेरी है। वर्तमान में यहां के राजा राम दशम, राष्ट्रीय प्रतीक गरुड़ और राष्ट्रीय ग्रंथ रामायण हैं, जिसे थाईलैंड में रामकियेन(राम कीर्ति) के नाम से जाना जाता है। बैंकॉक के प्रमुख चौराहे रथचेप्रयोंग पर ब्रह्मा जी के मंदिर में लक्ष्मी-गणेश की मूर्तियां शोभायमान हैं। यहां के राज्यों के नाम द्वारावती, श्रीविजय, अयोध्या सुखोदय और नगरों

के नाम कांचनबुरी, राजबुरी, लोबपुरी तथा गलियों के नाम राजाराम, राजा-रानी, महाजया और चक्रवंश भारतीय संस्कृति से प्रभावित हैं। यहां भारतीय संस्कृति का आगमन प्रथम शताब्दी में हुआ, जहां सर्वप्रथम व्यापारी और उसके उपरांत धर्म प्रचारक पहुंचे थे। आज भी 400 से अधिक मंदिर बैंकॉक के आसपास देखे जा सकते हैं।

कंबोडिया :

कंबोडिया में प्रथम शताब्दी में भारतीय मूल के शासक कौन्दिन्य राजवंश का शासन था, जिससे स्पष्ट है कि कंबोडिया भारत का बहुत पुराना सांस्कृतिक केंद्र है। विश्व का सबसे बड़ा विष्णु मंदिर यहाँ अंकोरवाट में स्थित है, जिसके पांच शिखर सुमेर पर्वत के शिखरों को प्रदर्शित करते हैं, यहां के राजा सूर्यवर्मन को विष्णु के रूप में जाना जाता है। यहां के भव्य स्मारकों में रामायण, महाभारत और पुराणों के अनेक आख्यानों को प्रदर्शित किया गया है, जिसमें सबसे बड़ा दृश्य समुद्र मंथन का है, साथ ही शिव, विष्णु और बुद्ध की मूर्तियां भी स्थापित की गई हैं। इसी प्रकार एक अन्य मंदिर यशोधरपुर में बाफुओन का है जो 11वीं शताब्दी में बनवाया गया था। कंबोडिया में चौदहवीं शताब्दी तक संस्कृत को राजभाषा का गौरव प्राप्त रहा है।

वियतनाम :

भारत के व्यापारियों और राजकुमारों द्वारा भारतीय संस्कृति का प्रसार यहां किया गया, यहां के नगरों के नाम इंदरपुर, अमरावती, विजय, कोठार, पांडुरंग आदि जो की भारतीय भाषा से मिलते जुलते हैं। यहां के स्थानीय लोगों को चम कहते हैं और इन लोगों ने बड़ी संख्या में हिंदू और बौद्ध मंदिरों का निर्माण कराया था, जिनमें भगवान शिव, गणेश, लक्ष्मी, पार्वती, बुद्ध, लोकेश्वर आदि अधिक पूज्नीय हैं।

मलेशिया :

मलेशिया के केडाह तथा वैलेस्ली प्रांत से शैव धर्म के प्रचलन की जानकारी प्राप्त होती है। यहां से कुछ त्रिशूलधारी देवियों की मूर्तियां भी प्राप्त हुई हैं। सातवीं और आठवीं शताब्दी में निर्मित ग्रेनाइट का नंदी-शीर्ष, दुर्गा प्रतिमा और गणेश मूर्ति भी प्राप्त हुए हैं। यहां संस्कृत भाषा और ब्राह्मी लिपि प्रचलन में थी, हनुमान और गरुड़ की अलौकिक शक्तियां जन सामान्य में लोकप्रिय थीं। यहां से प्राप्त संस्कृत भाषा के लिगोर शिलालेख को भारत मलेशिया संबंधों को जानने का महत्त्वपूर्ण साधन माना जाता है।

इंडोनेशिया :

नवीं शताब्दी में निर्मित जावा द्वीप का प्रम्बनन मंदिर, इंडोनेशिया का सबसे बड़ा शिव मंदिर है। जहां ब्रह्मा विष्णु महेश के सामने क्रमशः तीनों के वाहन हंस, गरूड, नंदी को और साथ ही देवी दुर्गा व गणेश स्थापित किये गये हैं। इन सभी मंदिरों के चारों तरफ लगभग 240 मंदिरों को पंक्तिबद्ध तरीके निर्मित किया गया है, जहां रामायण तथा कृष्णा की कथा के चित्र उकेरे गए हैं। बाली द्वीप में संस्कृत के 500 से अधिक सूक्त तथा श्लोक संकलित किए गए हैं। यद्यपि इंडोनेशिया विश्व का सबसे बड़ा इस्लामिक देश है, किंतु आज भी बाली पूरी तरह से हिंदू संस्कृति और धर्म का अनुसरण कर रहा है। आज भी इंडोनेशिया में पवित्र कुरान को संस्कृत में पढ़ा और पढ़ाया जाता है, यहां के लोग अनेकता में एकता पर विश्वास करते हैं तभी तो यहां का ध्येय वाक्य है **भिन्नेक तुंगल इक** (भिन्नता में एकत्व)

समीक्षा :

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि भारत में कुछ तो विशिष्ट था जिसके कारण वह कभी भी समाप्त नहीं हो सका। भारत विदेशी आक्रांताओं के सम्मुख कभी नहीं झुका यदि कभी विदेशी शत्रु अधिक शक्तिशाली हुआ तो भारत ने

Research Hub International Journal

केवल शिर मात्र झुका करके झंझावात के निकल जाने का इन्तज़ार किया और पुनः उसी गौरव के साथ खड़ा हो गया। भारत राजनीतिक रूप से विविध कालों और स्थानों में अनेक राज्यों, रियासतों और जगीरों में बंटा रहा, किंतु भारत के संस्कार और यहां के नागरिकों के उच्च आदर्शों को इन राज्यों की सीमाओं ने कभी रोकने का ना तो प्रयास किया और ना ही षड्यंत्र। भारत अपने हड़प्पाकाल, वैदिककाल, मौर्यकाल, कुषाणकाल, गुप्तकाल, हर्षवर्धन काल, गुर्जर प्रतिहार राजवंश, पृथ्वीराज चौहान आदि के समय भी एकजुट रहा और इस एकजुटता का मूल कारण यहां की समृद्ध संस्कृति की वह अमित छाप और संदेश था जिसने अपने मंदिरों और प्रार्थनाओं में ना केवल मनुष्य का बल्कि संपूर्ण जीव जगत के कल्याण की ही कामना की।

संदर्भ ग्रंथ :

- नाहर रतिभानु सिंह, प्राचीन भारत का राजनीतिक और सांस्कृतिक इतिहास (1967) किताब महल इलाहाबाद 1967
- चौधरी राधाकृष्ण, प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास (सप्तम परिशोधित संस्करण1989) भारती भवन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
- श्रीवास्तव, डॉ कृष्ण चंद्र, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति (नवीन संस्करण 2004) यूनाइटेड बुक डिपो, 21 यूनिवर्सिटी रोड इलाहाबाद 211 002
- https://hi.m.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%87%E0%A4%82%E0%A4%A1%E0%A5%8B%E0%A4%A8%E0%A5%87%E0%A4%B6%E0%A4%BF%E0%A4%AF%E0%A4%BE
- Indian Culture and Heritage (223) Syllabus: The National Institute of Open Schooling (NIOS)

Research Hub International Journal